[2021] 10 एस.सी.आर. 59

वैष्णो देवी निर्माण और सोल के माध्यम से प्रतिनिधित्व मालिक (डी)

कानूनी प्रतिनिधियों और अन्य के माध्यम से

बनाम

भारत संघ एवं अन्य

(सिविल अपील संख्या 18278/2017)

21 अक्टूबर, 2021

[संजय किशन कौल और बी. आर. गवई, न्यायमूर्ति]

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 - आदेश XXI, नियम 16 - फरमानों और आदेशों का निष्पादन - डिक्री के अंतरिती द्वारा निष्पादन के लिए आवेदन - भारत के विधि आयोग द्वारा 1973 में सिविल प्रक्रिया संहिता पर अपनी 54 वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश के अनुसरण में सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI, नियम 16 में स्पष्टीकरण को जोड़ना - यह स्पष्टीकरण 1976 के अधिनियम 104 [सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1976] द्वारा 01.02.1977 से अंतःस्थापित किया गया था - यह स्पष्टीकरण 1976 के अधिनियम 104 [सिविल प्रक्रिया संहिता(संशोधन) अधिनियम, 1976] द्वारा 01.02.1977 से अंतःस्थापित किया गया था - जुगल किशोर सराफ मामले में, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि आदेश XXI, नियम 16 "डिक्री पारित होने के बाद" निष्पादित लिखित रूप में एक असाइनमेंट द्वारा डिक्री के वास्तविक हस्तांतरण पर विचार करता है और इस प्रकार, जबकि भविष्य में पारित की जा सकने वाली डिक्री के हस्तांतरण या हस्तांतरण के लिए एक समझौता, इक्विटी में, इरादा रखने वाले अंतरिती को डिक्री में लाभकारी हित का दावा करने का अधिकार दे सकता है, ऐसा न्यायसंगत हस्तांतरण पूर्व समझौते से संबंधित नहीं है और अंतरिती को आदेश XXI, नियम 16 के अर्थ के भीतर लिखित रूप में असाइनमेंट द्वारा डिक्री का अंतरिती नहीं बनाता है - क्या आदेश XXI, नियम 16 में बाद के संशोधनों ने जुगल किशोर सराफ मामले में निर्धारित कानून की स्थिति को बदल दिया - अभिनिर्धारित स्पष्टीकरण इस प्रश्न पर उच्च न्यायालयों के विरोधाभासी निर्णयों के कारण जोड़ा गया था, यानी, क्या कोई व्यक्ति जिसके पास डिक्री का लिखित असाइनमेंट नहीं है, लेकिन जो डिक्री धारकों के अधिकार में सफल रहा है, वह धारा के तहत ऐसी डिक्री का हकदार है 146 सिविल प्रक्रिया संहिता - विधि आयोग ने यह स्पष्ट करने के लिए आदेश XXI, नियम 16 में संशोधन करने की सिफारिश की कि यह नागरिक प्रक्रिया संहिता की धारा 146 के प्रावधानों

को प्रभावित नहीं करता है और मुकदमे के विषय में अधिकारों का हस्तांतरणकर्ता डिक्री के अलग असाइनमेंट के बिना डिक्री का निष्पादन प्राप्त कर सकता है - ऐसा प्रतीत होता है कि इसका उद्देश्य असाइनमेंट के मुद्दे को निर्धारित करने के लिए बहु-काल्पनिक कार्यवाही नहीं है, बल्कि निष्पादन कार्यवाही में ही असाइनमेंट के मुद्दे को निर्धारित करना है - स्पष्टीकरण को जोड़कर आदेश XXI, नियम 16 में संशोधन करने का उद्देश्य उससे अलग-अलग वाद कार्यवाही दायर करने से बचना था और उस हद तक डिक्री से पहले के असाइनमेंट और डिक्री के बाद के असाइनमेंट के बीच के अंतर को दूर करना था - एक बार जब विधायी इरादा स्पष्ट हो जाता है, और कानून में संशोधन हो जाता है, तो संशोधन के बाद कानून की पहले की स्थिति को प्रबल नहीं कहा जा सकता है - स्पष्टीकरण में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI, नियम 16 में कुछ भी धारा 146 के प्रावधानों को प्रभावित नहीं करेगा और संपत्ति में अधिकार का हस्तांतरण करने वाला, जो एक वाद का विषय है, कानून द्वारा आवश्यक डिक्री के अलग असाइनमेंट के बिना डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन कर सकता है– डिक्री

अपीलों को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित: 1.1. यह एक स्वीकृत स्थिति है कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 पर भारत के विधि आयोग द्वारा अपनी 54वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों के अनुसरण में, स्पष्टीकरण को आदेश 21 नियम 16 में जोड़ा गया था जो पहले मौजूद नहीं था। स्पष्टीकरण इस प्रश्न पर उच्च न्यायालयों के विरोधाभासी निर्णयों के कारण जोड़ा गया था, यानी, क्या कोई व्यक्ति जिसके पास डिक्री का लिखित असाइनमेंट नहीं है, लेकिन जो डिक्री धारकों के अधिकार में सफल रहा है, वह धारा के तहत ऐसी डिक्री का हकदार है सिविल प्रक्रिया संहिता के 146. [अनुच्छेद 24]

1.2. विधि आयोग ने यह स्पष्ट करने के लिए आदेश XXI नियम 16 में संशोधन करने की सिफारिश की कि यह सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 146 के प्रावधानों को प्रभावित नहीं करता है और यह कि वाद के विषय में अधिकारों का हस्तांतरण करने वाला व्यक्ति डिक्री के अलग असाइनमेंट के बिना डिक्री का निष्पादन प्राप्त कर सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसका उद्देश्य समनुदेशन के मुद्दे को निर्धारित करने के लिए विविध कार्यवाहियों का होना नहीं है, बल्कि निष्पादन कार्यवाहियों में ही समनुदेशन के मुद्दे को निर्धारित करना है। [अनुच्छेद 25]

2. स्पष्टीकरण को जोड़कर सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 में संशोधन करने का उद्देश्य उससे अलग-अलग वाद कार्यवाही दायर करने से बचना था और उस हद तक डिक्री से पहले के

असाइनमेंट और डिक्री के बाद के असाइनमेंट के बीच के अंतर को दूर करना था। इस प्रकार, न्यायसंगत सिद्धांत पर आधारित दृष्टिकोण के रूप में जुगलकिशोर सराफ में निर्णय में भी जिस पर चर्चा की गई है, उसे सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 में स्पष्टीकरण जोड़कर शामिल करने की मांग की गई थी, जो कि पहले नहीं किया गया था। एक बार जब विधायी इरादा स्पष्ट हो जाता है, और कानून में संशोधन हो जाता है, तो संशोधन के बाद कानून की पिछली स्थिति को प्रबल नहीं कहा जा सकता है। [अनुच्छेद 26]

3. उच्च न्यायालयों के अलग-अलग विचारों पर विचार करते हुए, विधि आयोग ने इस तथ्य पर ध्यान दिया कि जुगल किशोर सराफ की दो अलग-अलग व्याख्याओं को अपनाया गया था। इस प्रकार, विधि आयोग ने वास्तव में कानूनी स्थिति को स्पष्ट करने की मांग की ताकि सर्वोच्च न्यायालय के फैसले की परस्पर विरोधी व्याख्या बनी रहे। स्पष्टीकरण में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 में कुछ भी धारा 146 के प्रावधानों को प्रभावित नहीं करेगा और संपत्ति में अधिकार का हस्तांतरण करने वाला, जो एक वाद का विषय है, कानून द्वारा आवश्यक डिक्री के अलग असाइनमेंट के बिना डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन कर सकता है। [अनुच्छेद 27]

जुगलकिशोर सराफ बनाम मैसर्स रॉ कॉटन कॉमैपनी लिमिटेड **ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 376:1955 एस. सी. आर. 1369-निर्दिष्ट।**

पेन्नैया पिल्लई बनाम टी नटराजन असारी **एआईआर 1968 मैड 190**; के.एन. संपत मुदलियार बनाम शकुंतला अम्मल **1964 2 एमएलजे 563**; प्रभाशीनी देबी बनाम रसिकलाल बनर्जी **1931 आईएलआर 59 कैल 297**; पूर्ण चंद्र भौमिक बनाम बरना कुमारी देवी एआईआर **1939 कैल 715**; सत्यनारायण बनाम अरुण माईक एआईआर **1955 एपी 81**; रामनाथ बनाम अनारदेई देवी एआईआर **1964 पैट 311** और मणि देवसिया बनाम वर्की स्कारिया (**1960) केर एलटी 1077** - का उल्लेख किया गया है।

<u>निर्णय विधि संदर्भ</u>

1955 एससीआर 1369	**करने के लिए भेजा**	**अनुच्छेद 16**

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 18278/2017।

कलकत्ता उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 13.02.2017 से, पोर्ट ब्लेयर में सर्किट बेंच नागरिक मूल संख्या 009/2017 ।

सिविल अपील संख्या 18279/2017 के साथ ।

जे.के. मिश्रा, वरिष्ठ अधिवक्ता, गणेश सुब्बियान, गौतम सिंह, कृष्णकुमार सिंह, अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता।

एम.के. मंडल, के.वी.जगदीशवरन, सुश्री जी. इंदिरा, हबीलिला नाना, कमल बिहारी पांडा, सुश्री मृणमयी साहू, प्रत्यार्थियो के अधिवक्ता।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया।

संजय किशन कौल, न्यायमूर्ति

1. वर्तमान अपील में विचार के लिए उत्पन्न होने वाले कानूनी विवाद की रूपरेखा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश XXI नियम 16 (इसके बाद '**सिविल प्रक्रिया संहिता**' के रूप में संदर्भित) के संदर्भ में डिक्री धारक के एक असाइनी के रूप में अपीलकर्ता के दावे की याचिका से निकलती है, जो मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 2 (1) (जी) के साथ पठित सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 146 का सहारा लेकर सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के तहत दायर किया गया था। महत्वपूर्ण पहलू सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 नियम 16 में स्पष्टीकरण को जोड़ना है, जिसे भारत के विधि आयोग द्वारा 1973 में सिविल प्रक्रिया संहिता पर अपनी 54वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश के अनुसार जोड़ा गया था, जो बदले में इस मुद्दे पर उच्च न्यायालयों के परस्पर विरोधी विचारों का अनुक्रम था।

तथ्यः

2. विवाद की सराहना करने के लिए, प्रासंगिक तथ्यों को निर्धारित किया जा रहा है। 29.12.1995 को भारत सरकार द्वारा सुरेंद्र नाथ कानूनगो @ एस.एन कानूनगो को पोर्ट ब्लेयर हवाई अड्डे पर रनवे के विस्तार के कार्य को निष्पादित करने के लिए एक अनुबंध प्रदान किया गया था (इसके बाद इसे 'वर्क्स' के रूप में संदर्भित किया गया है) श्री एस.एन कानूनगो का वर्ष 2012 में निधन हो गया और वर्तमान कार्यवाही में कानूनी उत्तराधिकारियों द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 2 से 7 के रूप में प्रतिनिधित्व किया जाता है, जबकि प्रत्यर्थी संख्या 1 अनुबंध प्रदान करने वाला प्राधिकरण है।

3. श्री एस एन कानूनगो ने एक ऐसी व्यवस्था की, जिसके तहत काम वैष्णो देवी कंस्ट्रक्शन को सौंपा गया, जो प्रभात भूषण कानूनगो (2017 के सिविल अपील संख्या 18278 में अपीलकर्ता संख्या 1) की एकमात्र स्वामित्व वाली कंपनी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता संख्या 2, सूर्य प्रकाश कानूनगो भी काम की देखभाल कर रहे थे। कार्य का एक अलग भाग बीडी बिल्डर्स को सौंपा गया था, जो स्वप्ना दास का एकमात्र स्वामित्व था और एक बार फिर, जाहिरा तौर पर उनके पति विजय कुमार दास कार्यों को निष्पादित करने में भूमिका निभा रहे थे क्योंकि उक्त दोनों पक्षों को सिविल अपील नंबर 18279/2017 में अपील नंबर 1 और 2 के रूप में शामिल किया गया है। श्री एस.एन. कानूनगो एक विशेष श्रेणी के ठेकेदार थे और अपीलार्थी द्वारा स्थापित मामले से यह प्रतीत होता है कि उन्हें एस.एन. कानूनगो की ओर से उन कार्यों को पूरा करने के लिए कार्य करना था, जिनके लिए उन्हें मासिक पारिश्रमिक और कुछ उपकरणों के किराए पर लेने के शुल्क का भुगतान किया जाना था, जो यहां अपीलार्थी द्वारा प्रदान किए जाने थे। अपीलार्थियों का दावा है कि उन्होंने श्री एस. एन. कानूनगो की ओर से रनवे के विस्तार के काम की निगरानी की थी, लेकिन जाहिर तौर पर उनके बकाया के कुछ हिस्से का भुगतान नहीं किया गया था। कहा जाता है कि श्री एस एन कानूनगो ने 27.10.1999 को श्री प्रभात भूषण कानूनगो के पक्ष में प्रतिभूति के रूप में एक करोड़ रुपये के लिए एक चेक के साथ एक असाइनमेंट विलेख निष्पादित किया था ताकि इस तरह के बकाया का भुगतान किया जा सके। दावा दोनों अपीलार्थियों के संबंध में था।

4. ऐसा प्रतीत होता है कि श्री एस. एन. कानूनगो और प्रत्यर्थी नं. 1 के बीच कुछ विवाद उत्पन्न हुए जिन्हें माध्यस्थम के लिए निर्दिष्ट किया गया था और 22.03.1999 को उनके पक्ष में एक अधिनिर्णय पारित किया गया था। श्री एस एन कानूनगो ने 28.01.2001 को पुरस्कार के तहत धन प्राप्त किया।

5. श्री एस. एन. कानूनगो द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 1 से दावा किए गए भुगतान न करने के एक अन्य समूह के संबंध में एक और संदर्भ दिया गया था।यह विवाद श्री टी के मिश्रा की एकमात्र मध्यस्थता के लिए निर्दिष्ट किया गया था, जिन्होंने 31.10.2006 को एस एन कानूनगो के पक्ष में एक निर्णय पारित किया था। प्रत्यर्थी संख्या 1 ने मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत पुरस्कार को रद्द करने के लिए कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाही दायर की। कार्यवाहियां उच्च न्यायालय के विद्वत एकल न्यायाधीश के दिनांक 28.09.2007 के आदेश के अनुसार सफल हुईं। उच्च न्यायालय की खंड पीठ के समक्ष अपील किए जाने पर, विद्वत एकल न्यायाधीश के निर्णय को दिनांक 03.03.2008 के निर्णय द्वारा उलट दिया गया और अपील को अनुमति दी गई।

6. श्री एस. एन. कानूनगो ने राशि की वसूली के लिए जिला न्यायाधीश, पोर्ट ब्लेयर के समक्ष अन्य निष्पादन मामला सं. 01/2008 के रूप में निष्पादन का मामला दायर किया। निष्पादन कार्यवाहियों के लंबित रहने के दौरान प्रत्यर्थी नं. 1 ने विशेष अनुमति याचिका (सिविल) नं. 21507/2008 के रूप में उच्चतम न्यायालय में एसएलपी दाखिल की, जिसमें दिनांक 03.03.2008 की खंड पीठ के निर्णय को चुनौती दी गई और निष्पादन कार्यवाहियों पर रोक लगाने का अनुरोध किया गया। नोटिस जारी किया गया और उसके पक्ष में फांसी की कार्यवाही पर रोक लगा दी गई। विशेष अनुमति याचिका के लंबित रहने के दौरान, श्री एस. एन. कानूनगो का 2012 में निधन हो गया और विशेष अनुमति याचिका और निष्पादन कार्यवाही दोनों में उनके कानूनी उत्तराधिकारियों द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। उच्चतम न्यायालय ने अंततः दिनांक 19.01.2016 के आदेश द्वारा विशेष अनुमति याचिका को खारिज कर दिया, जिसमें केवल ब्याज की दर में परिवर्तन किया गया था, यह देखते हुए कि दिया गया ब्याज उच्च पक्ष पर था और इसलिए इसे बिल की तारीख से 8% (सरल ब्याज) में संशोधित किया गया था।

7. यह उस स्तर पर है कि हमारे समक्ष दो अपीलों में अपीलार्थी क और ग अधिनियम की धारा 2 (1) (छ) और 36 के साथ पठित सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 1 और 2 के साथ पठित धारा 47 के तहत एक आवेदन के रूप में आपत्तियां दायर करके कार्यवाही में आए।

8. अपीलार्थियों द्वारा किए गए दावे श्री एस. एन. कानूनगो द्वारा किए गए कार्य के आधार पर थे और इस प्रकार, उनके हितों की रक्षा के लिए राशि को पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से जारी करने के किसी भी आदेश को स्थगित रखने की मांग की गई थी। ऐसा प्रतीत होता है कि अंतरिम राहत के लिए प्रार्थना सफल नहीं हुई क्योंकि आवेदन 08.04.2016 को खारिज कर दिए गए थे। अंततः 26.12.2016 को, डिक्रीटल राशि में अधिकार का दावा करने वाली आपत्तियों के दोनों सेटों को भी निष्पादन न्यायालय द्वारा इस आधार पर खारिज कर दिया गया था कि असाइनमेंट विलेख और चेक असाइनमेंट के तथ्य को स्थापित करने के लिए उन कार्यवाहियों में साबित नहीं हुए थे। हालाँकि, यह ध्यान दिया जा सकता है कि निष्पादन न्यायालय के समक्ष इस मामले में कोई सुनवाई नहीं हुई थी।

9. तत्पश्चात, उपर्युक्त आदेश को कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष सिविल पुनरीक्षण याचिका दायर करके निरस्त करने का अनुरोध किया गया था, जिसे दिनांक 13.02.2017 के आक्षेपित निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया था। विशेष अनुमति याचिका को प्राथमिकता दिए जाने पर, 17.04.2017 को नोटिस जारी किया गया था और मामले के निपटारे तक यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश भी जारी किया गया था। चूंकि निजी पक्षों के दो सेटों के बीच विवाद प्रतिवादी संख्या 1 पर ब्याज का दायित्व पैदा करेगा, दिनांक 06.03.2018 के आदेश के संदर्भ में, प्रत्यर्थी संख्या 1 का अनुरोध निष्पादन न्यायालय में डिक्रीटल राशि जमा करने के लिए स्वीकार किया गया था। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इस राशि को ब्याज वाली जमा राशि में रखा जाएगा।

<u>अपीलकर्ताओं की प्रस्तुतियाँ:</u>

10. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क देना चाहा कि अपीलार्थी श्री एस. एन. कानूनगो के अधिकृत नियुक्त प्रतिनिधि थे। उन्होंने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के तहत अपने आवेदन में सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 नियम 16 में निहित संशोधित प्रावधानों पर भरोसा करते हुए क और ग अधिनियम की धारा 2 (1) (छ) के साथ पठित सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 146 का सहारा लेते हुए दावा किया कि श्री एस एन कानूनगो ने स्वेच्छा से 27.10.1999 को एक असाइनमेंट विलेख निष्पादित किया, जो एक लिखित दस्तावेज है, साथ ही साथ प्रतिभूति के रूप में एक चेक जारी किया।

11. सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI का शीर्षक "फरमानों और आदेशों का निष्पादन" है। आदेश XXI का नियम 16 "डिक्री के अंतरिती द्वारा निष्पादन के लिए आवेदन" से संबंधित है और निम्नानुसार हैः

"आदेश XXI फ़रमानों और आदेशों का निष्पादन

....

16. डिक्री के अंतरिती द्वारा निष्पादन के लिए आवेदन। — जहां कोई डिक्री या, यदि कोई डिक्री दो या दो से अधिक व्यक्तियों के पक्ष में संयुक्त रूप से पारित की गई है, तो डिक्री में किसी डिक्री धारक का हित लिखित रूप में या कानून के संचालन द्वारा हस्तांतरित किया जाता है, तो अंतरिती डिक्री के निष्पादन के लिए उस न्यायालय को आवेदन कर सकता है जिसने इसे पारित किया था; और डिक्री को उसी तरीके से और उन्हीं शर्तों के अधीन निष्पादित किया जा सकता है जैसे कि आवेदन ऐसे डिक्री धारक द्वारा किया गया थाः

बशर्ते कि, जहां डिक्री या उपरोक्त ब्याज असाइनमेंट द्वारा हस्तांतरित किया गया है, वहां ऐसे आवेदन की सूचना हस्तांतरणकर्ता और निर्णय-देनदार को दी जाएगी, और डिक्री का निष्पादन तब तक नहीं किया जाएगा जब तक कि न्यायालय इसके निष्पादन पर उनकी आपत्तियों (यदि कोई हो) को नहीं सुनता हैः

परन्तु यह भी कि, जहां दो या दो से अधिक व्यक्तियों के विरुद्ध धन के संदाय की डिक्री उनमें से किसी एक को अंतरित की गई है, वहां उसे दूसरों के विरुद्ध निष्पादित नहीं किया जाएगा।

[स्पष्टीकरण। - इस नियम की कोई बात धारा 146 के उपबंधों को प्रभावित नहीं करेगी और संपत्ति में अधिकारों का अंतरिती, जो वाद का विषय है, इस नियम द्वारा अपेक्षित डिक्री के पृथक समनुदेशन के बिना डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन कर सकता है।] "

12. यह अवलोकन किया जा सकता है कि स्पष्टीकरण 1976 के अधिनियम 104 (इसके पश्चात् सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1976 के रूप में निर्दिष्ट) द्वारा 01.02.1977 से अंतःस्थापित किया गया था और संबंधित तर्कों के परिप्रेक्ष्य में इसका भौतिक संबंध है। आवेदन में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 का सहारा इस प्रावधान से उत्पन्न होता है जो एक डिक्री को निष्पादित करने वाले न्यायालय द्वारा निर्धारित किए जाने वाले प्रश्नों को निर्दिष्ट करता है, और यह निम्नानुसार हैः

"**47. आदेश निष्पादित करने वाले न्यायालय द्वारा निर्धारित किए जाने वाले प्रश्न।** — (1) जिस वाद में डिक्री पारित की गई थी, उसके पक्षकारों या उनके प्रतिनिधियों के बीच उत्पन्न होने वाले और डिक्री के निष्पादन, निर्वहन या संतुष्टि से संबंधित सभी प्रश्नों का निर्धारण डिक्री को निष्पादित करने वाले न्यायालय द्वारा किया जाएगा, न कि एक अलग वाद द्वारा।

[***]

(3) जहां यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या कोई व्यक्ति किसी पक्षकार का प्रतिनिधि है या नहीं, वहां इस धारा के प्रयोजनों के लिए ऐसा प्रश्न न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जाएगा।

[स्पष्टीकरण 1.- इस धारा के प्रयोजनों के लिए, एक वादी जिसका मुकदमा खारिज कर दिया गया है और एक प्रतिवादी जिसके खिलाफ मुकदमा खारिज कर दिया गया है, मुकदमे के पक्षकार हैं।

स्पष्टीकरण 2-(क) इस धारा के प्रयोजनों के लिए, किसी डिक्री के निष्पादन में विक्रय पर संपत्ति का क्रेता उस वाद का पक्षकार समझा जाएगा जिसमें डिक्री पारित की गई है; और

(ख) ऐसी संपत्ति के कब्जे को ऐसे क्रेता या उसके प्रतिनिधि को देने से संबंधित सभी प्रश्नों को इस धारा के अर्थ के भीतर डिक्री के निष्पादन, निर्वहन या संतुष्टि से संबंधित प्रश्न माना जाएगा।]"

13. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 146 "प्रतिनिधियों द्वारा या उनके विरुद्ध कार्यवाही" से संबंधित है और निम्नानुसार हैः

"**146. प्रतिनिधियों द्वारा या उनके विरुद्ध कार्यवाही।** — इस संहिता द्वारा या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा अन्यथा उपबंधित किए जाने को छोड़कर, जहां किसी व्यक्ति द्वारा या उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही की जा सकती है या आवेदन किया जा सकता है तो कार्यवाही की जा सकती है या उसके अधीन दावा करने वाले किसी व्यक्ति द्वारा या उसके विरुद्ध आवेदन किया जा सकता है।

14. इस प्रकार, यह अपीलार्थियों का मामला था कि उनके दावे ने श्री एस.एन कानूनगो के असाइनमेंट के तहत अधिकारों का दावा करने वाले अपीलार्थियों के संदर्भ में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के मापदंडों के भीतर एक निष्पादन न्यायालय द्वारा निर्धारित किए जाने के लिए एक सवाल उठाया (सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 146 के अनुसार). क और ग अधिनियम की धारा 2 (1) (छ) परिभाषा खंड का हिस्सा होने के कारण निम्नानुसार हैः

"**2. परिभाषाएँ. –**

(1) इस भाग में, जब तक कि संदर्भ में अन्यथा आवश्यक न हो, -

....

(छ) "कानूनी प्रतिनिधि" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो कानूनी रूप से मृतक व्यक्ति की संपत्ति का प्रतिनिधित्व करता है, और इसमें कोई भी व्यक्ति शामिल है जो मृतक की संपत्ति के साथ हस्तक्षेप करता है, और, जहां एक पक्ष प्रतिनिधि चरित्र में कार्य करता है, वह व्यक्ति जिस पर संपत्ति हस्तांतरित होती है।"

15. इस प्रकार सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों को एक पुरस्कार के निष्पादन के लिए इन कार्यवाहियों पर लागू करने की मांग की गई थी, जो कार्य के कारण श्री एस एन कानूनगो से दावा करने के लिए एक समनुदेशकर्ता/प्रतिनिधि की क्षमता में एक डिक्री में समाप्त हो गया था।

16. उपर्युक्त विवाद के संदर्भ में, सामान्य मामला यह है कि **जुगलकिशोर सराफ बनाम मेसर्स रॉ कॉटन कंपनी लिमिटेड**[1] में इस न्यायालय का निर्णय अत्यंत महत्वपूर्ण है। ऐसा इसलिए है क्योंकि विचारण न्यायालय के समक्ष सफल होने में अपीलार्थियों की विफलता इस तर्क पर आधारित है कि सर्वोच्च न्यायालय का यह निर्णय अपीलार्थियों के खिलाफ मामले को शामिल करता है। अनुच्छेद 26 पर एक विशिष्ट निर्भरता रखी गई थी, जिसके अनुसार आदेश XXI नियम 16 "डिक्री पारित होने के बाद" निष्पादित लिखित कार्य द्वारा डिक्री के वास्तविक हस्तांतरण पर विचार करता है। इस प्रकार, जबकि भविष्य में पारित की जा सकने वाली डिक्री का हस्तांतरण या हस्तांतरण करने के लिए एक समझौता, इक्विटी में, इरादा रखने वाले अंतरिती को डिक्री के पारित होने के बाद लाभकारी ब्याज का दावा करने का अधिकार दे सकता है, ऐसा न्यायसंगत हस्तांतरण पूर्व समझौते से संबंधित नहीं है और अंतरिती को सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 के अर्थ के भीतर लिखित रूप में असाइनमेंट द्वारा डिक्री का अंतरिती नहीं बनाता है।

17. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने उस प्रस्ताव के समर्थन में कुछ अन्य अनुच्छेद की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करने की कोशिश की, जिसे वे आगे बढ़ाना चाहते हैं, विशेष रूप से अनुच्छेद 52,54,56 और 59। इससे पहले बंबई उच्च न्यायालय और कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायिक उदाहरण को इस प्रस्ताव के लिए संदर्भित किया गया था कि आदेश XXI नियम 16 का उद्देश्य उन मामलों पर लागू होना नहीं था जहां एक डिक्री में न्यायसंगत हित के लिए व्यक्तियों के अधिकारों के संबंध में गंभीर प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हुई थी। दो दृष्टिकोणों का उल्लेख किया गया था, अर्थात्, डिक्री के अस्तित्व की आवश्यकता के बारे में सख्त दृष्टिकोण; और समानता पर आधारित दूसरा दृष्टिकोण, जब कोई समझौता लिखित रूप में किया गया हो, भले ही डिक्री से पहले, जो किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए आवश्यक जांच की सीमा के आधार पर न्यायालय के लिए वैकल्पिक हो सकता है।[2] इसके बाद नागरिक प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 के दायरे पर निर्णय के अनुच्छेद 53 में चर्चा की जाती है। सर्वोच्च न्यायालय ने राय दी

कि जब तक फांसी के लिए आवेदन करने वाला व्यक्ति डिक्री के हस्तांतरणकर्ता के रूप में अपना खिताब स्थापित नहीं करता, तब तक वह उस प्रावधान के लाभ का दावा नहीं कर सकता। इस तरह का कार्य लिखित रूप में या कानून के संचालन द्वारा हो सकता है। इस संबंध में संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 5 "संपत्ति के अंतरण" को एक ऐसे कार्य के रूप में परिभाषित करती है जिसके द्वारा अंतरणकर्ता वर्तमान में या भविष्य में संपत्ति अंतरणकर्ता या अंतरणकर्ता को देता है। उस संदर्भ में यह देखा गया था कि एक डिक्री जो हस्तांतरण की विषय वस्तु है, हस्तांतरण की तारीख पर अस्तित्व में होनी चाहिए। "वर्तमान में या भविष्य में" शब्द धारा 5 में "संपत्ति" शब्द के बजाय "व्यक्त करता है" शब्द के योग्य हैं और इस प्रकार, भविष्य में अस्तित्व में आने वाली डिक्री के लिए कार्य नहीं करेंगे। ऐसी डिक्री को लिखित रूप में किसी समनुदेशन द्वारा हस्तांतरित नहीं कहा जा सकता था और केवल भविष्य में निष्पादित किए जाने वाले अनुबंध में निहित मामला जो डिक्री पारित होते ही विशेष रूप से लागू किया जा सकता है, पारित होने पर डिक्री के अंतरिती के पक्ष में स्वचालित रूप से कोई हस्तांतरण नहीं होगा। चर्चा इस राय के साथ समाप्त होती है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 के तहत अधिनियमित वैधानिक प्रावधान का अर्थ लगाते हुए इस न्यायसंगत सिद्धांत को लागू करने के लिए कोई भी वारंट उचित नहीं होगा क्योंकि यह किसी भी तरीके को निर्धारित नहीं करता है जिसमें लिखित रूप में इस तरह के असाइनमेंट को निष्पादित किया जाना है ताकि डिक्री के हस्तांतरण को प्रभावी बनाया जा सके।

18. उच्चतम न्यायालय ने गौर किया कि **पूर्ण चंद्र भौमिक बनाम बर्ना कुमारी देवी**[3] में कलकत्ता उच्च न्यायालय ने न्यायसंगत सिद्धांत को लागू किया था और यह अभिनिर्धारित किया था कि जिस वादी के पक्ष में प्रतिवादी ने प्रतिभूति के रूप में एक बंधक बांड को निष्पादित किया था, वह डिक्री जो किए गए काम के लिए अवैतनिक बिलों पर देय धन की वसूली के लिए किसी तीसरे पक्ष के खिलाफ स्थापित मुकदमे में पारित की जाएगी, वह इस घोषणा का हकदार था कि वह प्रतिवादी के पक्ष में पारित डिक्री का एक समनुदेशक था और इस तरह, वह सौहार्दपूर्ण तरीके से या निष्पादन द्वारा डिक्रीटल ऋण का भुगतान करने का हकदार था। उच्च न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि निष्पादन कार्यवाहियों में जटिल तथ्यों या विधि के कठिन प्रश्नों की जांच से जुड़े प्रश्न पर निर्णय लेने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती है, क्योंकि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 ने डिक्री को निष्पादित करने वाले न्यायालय को उसमें उत्पन्न होने वाले और डिक्री के निष्पादन से संबंधित सभी प्रश्नों पर निर्णय लेने के लिए अधिकृत किया है, क्योंकि यह

न्यायनिर्णयन की सुविधा प्रदान करता है और उसी के निर्धारण के लिए एक अलग मुकदमा दायर करने की आवश्यकता को दूर करता है।

19. संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 3 के अर्थ के भीतर कार्रवाई योग्य दावे के अंतरण के संबंध में एक अंतर बनाया गया था। कार्रवाई योग्य दावे की परिभाषा के भीतर आने वाले बही ऋण या संपत्ति के हस्तांतरण के मामलों में, इसमें अनिवार्य रूप से एक डिक्री में एक हस्तांतरणकर्ता के अधिकार का हस्तांतरण शामिल है जो एक लंबित मुकदमे में उसके पक्ष में पारित किया जा सकता है और जिस क्षण न्यायालय द्वारा उसके पक्ष में एक डिक्री पारित की जाती है, वह डिक्री हस्तांतरणकर्ता द्वारा पहले से ही निष्पादित लिखित कार्य के आधार पर स्वतः हस्तांतरणकर्ता के पक्ष में स्थानांतरित हो जाती है। बुक ऋण डिक्री में विलय होने से ऋण के अपने चरित्र को नहीं खोता है और इसके अलावा और कुछ नहीं, हस्तांतरणकर्ता हस्तांतरणकर्ता के पक्ष में न्यायालय द्वारा पारित डिक्री के लाभ का हकदार है। इस प्रकार, कार्रवाई योग्य दावे का हस्तांतरणकर्ता हस्तांतरणकर्ता के पक्ष में कदम रखेगा और हस्तांतरणकर्ता द्वारा उसके पक्ष में निष्पादित लिखित कार्य के आधार पर डिक्री का हस्तांतरणकर्ता होने का दावा करेगा। इसलिए अंतरिती सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 के तहत डिक्री को निष्पादित करने का दावा कर सकता है।

20. चर्चा के परिप्रेक्ष्य में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया था कि सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता में किए गए संशोधन महत्वपूर्ण हैं क्योंकि निर्णय उस संशोधन से पहले का है। बेशक, यह एक असाइनमेंट विलेख के कार्रवाई योग्य दावे के दावे के आधार पर याचिका के लिए एक वैकल्पिक याचिका थी।

<u>उत्तरदाताओं की प्रस्तुतियाँ:</u>

21. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों ने अपीलार्थियों के अधिकार पर विवाद किया और दावा किया कि असाइनमेंट विलेख स्वयं एक विवादित दस्तावेज है जिसने 2016 तक 17 वर्षों से प्रकाश में नहीं आया था,

और अपीलार्थियों के कानूनी नोटिसों में इसका उल्लेख नहीं मिला था। अपीलार्थी 22.03.1999 को स्वर्गीय श्री सुरेन्द्र नाथ कानूनगो के पक्ष में पुरस्कार दिए जाने पर समनुदेशन पत्र का सहारा ले सकते थे। प्रतिभूति के रूप में दिए गए चेक को तब भुनाया जा सकता था जब 2001 में श्री एस.एन. कानूनगो को पुरस्कार राशि का भुगतान किया गया था। अपीलार्थियों ने उस पुरस्कार के अनुसरण में कोई कदम नहीं उठाया, लेकिन इस मुद्दे को केवल उस स्तर पर उठाया है जब 2006 में दूसरा पुरस्कार दिया गया था। विशेष रूप से, दूसरे पुरस्कार की पुष्टि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी की गई थी। अपीलार्थी श्री एस.एन. कानूनगो के कानूनी प्रतिनिधि नहीं थे, लेकिन अधिक से अधिक यह एक स्वतंत्र दावा था जिसे उचित दीवानी कार्यवाही में न्यायनिर्णित किया जा सकता था। डिक्री अस्तित्व में नहीं होने के कारण, प्रत्यर्थी ने दावा किया कि वे ***जुगलकिशोर सराफ***[4] के फैसले द्वारा पूरी तरह से कवर किए गए थे और आदेश XXI नियम 16 में संशोधन कानून की स्थिति को नहीं बदलेगा जैसा कि उसमें निर्धारित किया गया है।

22. यह दलील दी गई थी कि अपीलार्थी ऐसे व्यक्तियों में से थे जिन्हें श्री एस.एन. कानूनगो द्वारा नियुक्त किया गया था और उन्हें उनके बकाया का भुगतान किया गया था। कोई राशि बकाया नहीं थी और उन पर कुछ भी बकाया नहीं था। असाइनमेंट विलेख और दिनांक 27.10.1999 का चेक धोखाधड़ी वाले दस्तावेज थे और श्री एस.एन कानूनगो के लेटर हेड और हस्ताक्षरित चेक का दुरुपयोग किया गया था।

निष्कर्ष:

23. प्रस्तुतियों के विश्लेषण पर इस बात में कोई संदेह नहीं है कि विवादित निर्णय पूरी तरह से कानून के अनुसार होते यदि संशोधन 1976 में नहीं किए जाते और **जुगलकिशोर सराफ**[5] के फैसले द्वारा पूरी तरह से कवर किए जाते। इस प्रकार, एकमात्र पहलू जिस पर हमें विचार करना है, वह यह है कि क्या उस संशोधन से उक्त निर्णय में उल्लिखित कानूनी स्थिति में कोई अंतर आया है।

24. यह एक स्वीकृत स्थिति है कि भारत के विधि आयोग द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 पर अपनी 54वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों के अनुसरण में आदेश 21 नियम 16 में स्पष्टीकरण जोड़ा गया था जो पहले मौजूद नहीं था। स्पष्टीकरण को इस प्रश्न पर उच्च न्यायालयों के विरोधाभासी निर्णयों के कारण

जोड़ा गया था, अर्थात, क्या कोई व्यक्ति जिसके पास डिक्री का लिखित असाइनमेंट नहीं है, लेकिन जो डिक्री धारकों के अधिकार में सफल रहा है, वह सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 146 के तहत इस तरह के डिक्री का हकदार है।

25. ***पेन्निया पिल्लई बनाम टी नटराजन असारी*** में मद्रास उच्च न्यायालय ने इस प्रश्न का सकारात्मक निर्णय दिया। उच्च न्यायालय ने अंतरिती को धारा 146 का लाभ उठाने की स्वतंत्रता दी यदि वे सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 के प्रावधानों के अंतर्गत नहीं आते हैं और इस प्रकार, डिक्री पारित होने के बाद संपत्ति के अंतरिती को कवर करेगा। इस पक्ष में विद्वत न्यायाधीश ने ***के. एन. संपत मुदलियार बनाम सकुंथला अम्मल***[7] मामले में मद्रास उच्च न्यायालय के पूर्व निर्णय से असहमति जताई, जिसमें कहा गया था कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 146 का प्रभाव सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 पर हावी होने का नहीं हो सकता है। विधि आयोग ने पूर्व निर्णय (जो बाद में दिया गया था) में लिए गए दृष्टिकोण से सहमति व्यक्त की और आगे कहा कि इस दृष्टिकोण का समर्थन आंध्र प्रदेश[8], पटना[9] और केरल[10] के उच्च न्यायालयों ने भी किया था। इस प्रकार, विधि आयोग ने यह स्पष्ट करने के लिए आदेश XXI नियम 16 में संशोधन करने की सिफारिश की कि यह धारा 146 के प्रावधानों को प्रभावित नहीं करता है और यह कि वाद के विषय में अधिकारों का हस्तांतरणकर्ता डिक्री के अलग असाइनमेंट के बिना डिक्री का निष्पादन प्राप्त कर सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसका उद्देश्य समनुदेशन के मुद्दे को निर्धारित करने के लिए विविध कार्यवाहियों का होना नहीं है, बल्कि निष्पादन कार्यवाहियों में ही समनुदेशन के मुद्दे को निर्धारित करना है।

26. उपर्युक्त के संदर्भ में हमारा विचार है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 में स्पष्टीकरण को जोड़कर संशोधन करने का उद्देश्य वर्तमान मामले में मौजूद परिदृश्य से निपटना, उससे अलग-अलग वाद कार्यवाही से बचना और उस हद तक डिक्री से पहले के असाइनमेंट और डिक्री के बाद के असाइनमेंट के बीच के अंतर को हटाना था। इस प्रकार, न्यायसंगत सिद्धांत पर आधारित दृष्टिकोण के रूप में **जुगलकिशोर सराफ**[11] में निर्णय में भी जिस पर चर्चा की गई है, उसे सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 में स्पष्टीकरण जोड़कर शामिल करने की मांग की गई थी, कुछ ऐसा जो पहले नहीं किया गया था। एक बार जब विधायी इरादा स्पष्ट हो जाता है, और कानून में संशोधन हो जाता है, तो कानून की पूर्व

स्थिति को संशोधन के बाद प्रबल नहीं कहा जा सकता है और इसमें कोई संदेह नहीं है कि वर्तमान मामला संशोधन के बाद का है।

27. हम यह भी जोड़ सकते हैं कि उच्च न्यायालयों के अलग-अलग विचारों पर विचार करते हुए विधि आयोग ने इस तथ्य पर ध्यान दिया कि **जुगलकिशोर सराफ**[12] की दो अलग-अलग व्याख्याओं को अपनाया गया था। इस प्रकार, विधि आयोग ने वास्तव में कानूनी स्थिति को स्पष्ट करने की मांग की ताकि सर्वोच्च न्यायालय के फैसले की परस्पर विरोधी व्याख्या बनी रहे। स्पष्टीकरण में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 16 में कुछ भी धारा 146 के प्रावधानों को प्रभावित नहीं करेगा और संपत्ति में अधिकार का हस्तांतरण करने वाला, जो एक वाद का विषय है, कानून द्वारा आवश्यक डिक्री के अलग असाइनमेंट के बिना डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन कर सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपीलार्थी वाद की कार्यवाही में पक्षकार नहीं हैं, बल्कि वे डिक्री धारक के समनुदेशकों के रूप में दावा करते हैं।

28. हम यह स्पष्ट करते हैं कि हम दस्तावेज़ की वैधता, यानी असाइनमेंट विलेख या चेक पर नहीं जा रहे हैं क्योंकि यह निष्पादन न्यायालय द्वारा तय किया जाने वाला मामला होगा। सवाल यह था कि क्या शुरुआत में, अपीलकर्ताओं की आपत्ति को इस आधार पर खारिज किया जा सकता है कि वे समनुदेशिती थे जिन्होंने डिक्री पारित होने से पहले अधिकार हासिल कर लिए थे। काफी लंबे समय तक चलने के बावजूद, बाकी काम निष्पादन न्यायालय का होगा। हम केवल इतना ही जोड़ सकते हैं कि पक्षों द्वारा एक सौहार्दपूर्ण समाधान खोजने का हमारा प्रयास सफल नहीं था, इस प्रकार हमारे पास विवादित निर्णयों को दरकिनार करने और इस न्यायालय के निर्णय के संदर्भ में निर्धारण के लिए मामले को निष्पादन न्यायालय को वापस भेजने के अलावा बहुत कम विकल्प हैं। पहले ही हो चुके समय को ध्यान में रखते हुए, निष्पादन न्यायालय जल्द से जल्द इस पर विचार करने का प्रयास करेगा।

29. तदनुसार अपीलों को अनुमति दी जाती है और पक्षकारों को अपना खर्च वहन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

देविका गुजराल अपील की अनुमति.

1. एआईआर 1955 एससी 376।

2. प्रभाशीनी देबी बनाम रसिकलाल बनर्जी 1931 आईएलआर 59 कैल 297।

3. एआईआर 1939 कैल 715।

4. पूर्वोक्त

5. पूर्वोक्त

6. एआईआर 1968 मैड 190।

7. 1964 2 एमएलजे 563।

8. सत्यनारायण बनाम अरुण माईक एआईआर 1955 एपी 81।

9. रामनाथ बनाम अनारदेई देवी एआईआर 1964 पैट 311।

10. मणि देवसिया बनाम वर्की स्कारिया (1960) केर. एलटी 1077.

11. पूर्वोक्त

12. पूर्वोक्त

दिब्या कुमारी की देखरेख में, अधिवक्ता सरवजीत सिंह द्वारा अनुवादित।